RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-10
October-2018

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

शेखावाटी में ठिकानों की भूमिकर प्रथा एवं लाग–बाग

महेन्द्र कुमार

पीएच.डी. छात्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 10 October 2018

Keywords
भू–बन्दोबस्त, भूमिकर प्रथा व लाग–बाग व्यवस्था

ABSTRACT

बीतें कई दशकों से हमारे देश में किसान समुदायों पर ठिकानेदारों एवं जागीरदारों द्वारा शोषण किया जा रहा है। आम जनता व किसानों पर अनेक प्रकार के भू–राजस्व कर, भूमि से बेदखली व लाग–बाग बेगार आदि लादने का चक्रव्यूह चला आ रहा है। भारत में अंग्रेजी सत्ता का एक प्रमुख अंग भारतीय कृषि व्यवस्था को प्रभावित करना रहा है। इसके फलस्वरूप प्राचीन कृषि व्यवस्था नवीन प्रशासनिक ढांचे के अधीन शनैः शनैः टूटती चली गयी। इसी के साथ नई भू–बन्दोबस्त, भूमिकर प्रथा व लाग–बाग व्यवस्था ने नए प्रकार के भूस्वामी पैदा कर दिए।किसानों के पास जीवनोपार्जन के अन्य स्त्रोत कम होने के कारण भूमि के ऊपर भार अधिक बढता गया और भूमि की कीमते भी बढ़ गई। ठिकानेदारों तथा जागीरदारों का भाग अत्यधिक होने के कारण किसान साहुकारों तथा जमींदारों के चुंगल में फसता चला गया। अनुपस्थित भूस्वामित्व, परजीवी बिचौलिए, लोभी, साहूकार इन सभी ने मिलकर किसान को अत्यधिक निर्धनता के गर्त में धकेल दिया। अतः अब किसान को विदेशी ही नहीं, अपितु स्थानीय शोषणाकारियों से भी निबटना था।

शेखावाटी में ठिकानों की भूमिकर प्रथा

शेखावाटी में ठिकानों की आय का मुख्य साधन भूमि कर था। इसके अतिरिक्त विभिन्न कस्टमरी ड्यूज जिन्हें लागबाग कहा जाता था, किसान से वसूल की जाती थी। पानचराई, खुटाबंदी, न्यौता, कांसा, धुंआंबांछ आदि अनेक लागें भी कर के रूप में वसूल की जाती थी। बड़े ठिकानों की आय के अन्य स्रोत जकात (सीमाकर), राहदारी (चुंगी) आदि व्यापारिक कर भी थे। पशुओं के राज्य के बाहर ले जाने पर सीमा कर लगता था। इसके अतिरिक्त भेंट, नजराना, खनिज पदार्थों, नशीली वस्तुओं व नाल बन्दी (गृहकर) आदि से भी मामूली आय होती थी।[1]

कुल मिलाकर भूमिकर ही ठिकानों की आय का मुख्य स्रोत था जो सीधा किसानों से वसूला जाता था क्योंकि इस क्षेत्र में अन्य आर्थिक गतिविधियां भी कृषी उत्पादन से जुड़ी हुई थी। इस भूमि कर की वसूली भी भिन्न–भिन्न तरीकों से की जाती थी। निम्न प्रथायें मुख्य रूप से प्रचलित थी–[2]

इजारेदारी प्रथा – इस प्रथा के अनुसार ठिकाने की सम्पूर्ण भूमि इजारे पर दे दी जाती थी। जो इजारेदार सबसे अधिक रकम देने को राजी होता, उसे एक या अधिक वर्षों के लिये भूमि इजारे पर मिल जाती। इस प्रथा का मूल दोष यह था कि इजारेदार किसानों से मनमाना लगान वसूल करते थे। 'बढ़े सो पावे' के नीतिहीन सिद्धान्त पर एक के बाद दूसरा इजारा होने से गाँव के लगान की रकम उतरोत्तर बढ़ती जाती थी।

बंटाई प्रथा– इस प्रथा के अन्तर्गत वास्तव में जितना अनाज पैदा होता था उसका तयशुदा हिस्सा ठिकाने को देना होता था। यह हिस्सा भिन्न–भिन्न काल में बदलता रहा है। कभी यह 1/5, 1/4, 1/3, 1/2 तक भी रहा है। लेकिन किसान इसी प्रथा को पसन्द करते थे।

कूंत प्रथा– इसके अन्तर्गत अनाज की कूंत (अन्दाज से निर्धारण) खड़ी फसल पर होता था। कूंत ठिकाने का कामदार और गाँव का चौधरी किया करता था। यह प्रथा पश्चातवर्ती वर्षों में बहुत विवादास्पद हुई। सीकर ठिकाने में इस कार्य हेतु 'लटारे' नियुक्त किये हुए थे जो मनमानी कूंत करने के कारण इतने बदनाम हुए कि लोग इन्हें 'लुटेरे' कहने लगे।

नगदी प्रथा – शेखावटी के खेतड़ी ठिकाने में सबसे पहले भूमि बन्दोबस्त हुआ जहां भूमि को किस्मों के आधार पर बांटकर नगद लगान तय हुआ। इसलिये वहां किसान आन्दोलन का कोई प्रभाव नहीं हुआ। शेष शेखावटी के किसी भी ठिकाने में भूमि बन्दोबस्त नहीं होने से लगान की निश्चित दरें नहीं थीं।

लगान – किसानों से खेती का लगान ठिकाने वसूल करते थे, धीरे–धीरे भूम सम्बन्धी सभी अधिकार इन्होंने अपने में निहित कर लिये थे। लगान सामान्यतः दो किस्म की भूमि पर होते थे– बारानी और चाही। जिस जमीन पर कुआं बना होता था चाहे उस कुएं को किसी ने भी बनाया हो और उससे सिंचाई भी न की जावे, उस पर लगान 'चाही' लगता था। यह

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

लगान 'बारानी' से लगभग चार गुना वसूला जाता था। जहां पड़त जमीन होती वहां ठिकानेदार बस्ती बसाने की चेष्टा करते ताकि ठिकाने की आय में बढ़ोतरी हो सके। इन बस्तियों में यदि पीने के पानी की सुविधा के नाम पर कोई कुआं ठिकानेदार बनवा देते तो इन कुओं के नीचे आने वाली जमीन पर भी 'चाही का लगान' आरोपित कर दिया जाता था। इस प्रकार पीने के पानी की सुविधा के नाम पर भी आम प्रजा को लगान भरना पड़ता था।

शेखावटी में 20वीं सदी के आरम्भ तक लगान फसल का 1/5 से 1/4 हिस्सा तक था। उस जमाने में भूमि की बहुलता, कम जनसंख्या व ठिकानों का संयत व्यवहार था। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद ठिकानों ने लगान अचानक बढ़ा दिये जिसके पीछे आर्थिक मंदी का दौर व उद्योग धन्धे नष्ट होना तथा ठिकानों की शान–शौकत में वृद्धि मुख्य कारण रहे। फिर ठिकानों की भूमि भी वंशजों में बंटते रहने की प्रथा के कारण बहुतों के पास थोड़ी–थोड़ी जमीने रह गई। एक–दो कोठी कुएं का मालिक भौमिया इस भूमि पर ही आश्रित था, इसी से पर्दे में रहने वाले पूरे परिवार का पालन करना पड़ता था। अतः लगान पहले दो गुना, फिर चार गुना या जितना अधिक वसूल कर सकते थे, करने लगे।[3]

1925 से 1935 के बीच लगान एकदम दुगना और कहीं–कहीं तो ढाई गुना तक हो गया। यदि पचास वर्ष पहले के लगान पर दृष्टि डालें तो उस समय से अब तक दस गुना वृद्धि कर ली गई, साथ ही बीघा का माप भी घटा दिया गया। पटियाला की नारनौल निजामत के गाँवों में जहाँ लगान आठ आना प्रति बीघा था उससे सटे हुए शेखावटी के गौरीर गाँव में 2 रू. प्रति बीघा लगान था, बीघा भी पटियाला की 2/3 नाप था। बीघा घटाने में जागीरदारों ने यहाँ तक बेईमानी की, कि कई तो 50 हाथ की करीब से ही नापी गई जमीन को बीघा कहने लगे।

जिन इलाकों में भूमि बन्दोबस्त नहीं हुआ था, उनमें भूमिकर कृषि उपज के रूप में लिया जाता था, शेखावटी का बड़ा भाग इसी व्यवस्था के तहत आता था। उपज का यह भाग 1/2 से लेकर 1/8 तक विभिन्न भागों में प्रचलित था। राजस्थान जागीर समाप्ति कमेटी ने सही ही उद्धृत किया है– जब भूमिकर कृषी उपज के रूप में वसूल किया जाता है, यह खालसा भूमि के लगान के बनिस्पत बहुत ज्यादा है बल्कि यह चार गुना ज्यादा है। चूंकि शेखावटी का ज्यादातर भू–भाग इन इजारेदारों (ठिकानेदारों) की व्यवस्था के अधीन था, अतः खालसा की बजाय यहाँ लगान की दरें व शोषण अधिक था।[4]

शेखावाटी में ठिकानों द्वारा लाग–बाग

लगान के अलावा शेखावाटी के ठिकानेदार अपने किसानों से अनेक प्रकार की लागें भी लेते थे। ये लागें भी वैसी ही निर्दयता और पाबन्दी के साथ वसूल की जाती थी जैसे कि लगान। साथ ही इन लोगों की संख्या बढ़ती ही रहती थी जो बढ़ते–बढ़ते 37 तक पहुँच गई थी। उन अनेक लागों में से जो ठिकानेदार अपने किसानों से उनकी गरीबी को कोई भी ख्याल न करके वसूल करते थे, कुछेक का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है–[5]

मलबा–लगान के अलावा लगान उगाही के समय वसूल की जाने वाली यह वह लाग थी जो ठिकाने के सवारों, कारिंदों और ऊंट–घोड़ों की खुराक में उस गांव में रहने के दिनों में खर्च होती थी। यह लाग सारे गांव पर सम्मिलित रूप में डाली जाती थी।ठिकानेदार उन नौकरों का वेतन भी मलबे की रकम में ही शामिल करते थे जो उसे गांव में से सेरणा, सिपाही आदि के रूप में रखने होते थे।हालांकि ये नौकर किसानों को तंग करने के लिए ही रखे जाते थे।

खुटाबन्दी–शेखावाटी में यह लाग ऊंटों पर ली जाती थी। जो किसान ऊंट रखता था उसे दो रुपये से तीन रुपये तक वार्षिक प्रति ऊंट ठिकानेदार को देना होता था।

पानचराई–यह लाग भेड़–बकरियों पर दो–तीन आने वार्षिक प्रति भेड़ या बकरी पर ठिकानेदार वसूल करता था।

खुद–हरी फसल जिसमें कि अनाज नहीं पड़ताखुद कहलाती थी। ठिकानेदार हरी फसल के समय अपने ऊंट और घोड़े देहातों में भेज देते थे, जिन्हें किसान नम्बरवार अपने खेत में खुद खिलाने के लिए विवश था।

ग्वार का लादा–ठिकानेदारों के गढ़ के पास जो गांव होते थे, उन्हें खुद के अलावा हरी ग्वार भी ठिकानेदारों के यहां पहुंचानी पड़ती थी। दूर के गांवों में इसके बदले रकम डाल दी जाती थी।

कड़बी का लादा–प्रत्येक गांव को प्रति वर्ष दो चार गाड़ी कड़बी ठिकानेदारों के यहां पहुंचानी होती थी।

कोरड़ का लादा–मूंग, मोठ व चौले की फलियां भी ठिकानों में पहुंचाना किसानों के ऊपर बांध रखा था।

हलबेठिया–यह वह लाग थी जो प्रति हल पर एक रुपया प्रति वर्ष के हिसाब से वसूल की जाती थी।

पटड़ामेख–जागीरदार के यहां विवाह के अवसर पर खूटे व मेखों के लिए जो खर्च होता था, वह पटड़ामेख कहलाता था तथा किसानों से वसूल किया जाता था।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

न्यौता–ठिकानेदारों के घरों में जितने भी विवाह होते थे उनका कुल खर्च वे अपने गांवों पर डाल देते थे और लगान वसुली के समय किसानों से वसूल कर लिया जाता था।

कारजखर्च–यह लाग, विवाह की भांति मृतक भोजों पर, जो कि ठिकानेदार के सम्बन्धियों के मरने पर होते थे, कारज खर्च के नाम सेकिसानों से वसूल की जाती थी।

बाईजी का हाथ–ठिकानेदार के यहां जब लड़की पैदा होती थी तो उसके जन्म से विवाह होने तकजेब खर्च के लिए प्रति किसान से एक रुपया प्रति वर्ष वसूल किया जाता था।

कुवरजी का कलेवा–यह लोग उपरोक्त तरीके से कुवर साहब के जेब खर्च के लिए वसूल कीजाती थी।

लिखिया की लाग –ठिकानेदार अपनी याददाश्त के लिए किसान का नाम खाते में लिखता था, उसके लिए भी दो आना लाग के रूप में वसूल करता था।

जाजम खर्च–ठिकानेदार के यहां बिछाने के लिए बिछायत की जरूरत होती थी तो किसानों से इस लाग के नाम पर प्रति वर्ष निश्चित रकम वसूल की जाती थी।

ढोल लाग–किसानों के लड़के के विवाह पर एक से तीन रुपया व लड़की के विवाह पर आठ आना से दो रुपये तक ढोल लाग के नाम से किसानों से वसूल किया जाता था।

धुआँ बाच–घरों के चूल्हे के धुएं के हिसाब से (यानि घर में जितने चूल्हे जलते थे) यह लाग वसूल होती थी। यह लाग धुआँ बाच के नाम से मशहूर थी।

हरी–फसल के पक जाने से पहले ही जो अतिरिक्त लगान वसूल कर लिया जाता था, उसे हरी की लाग कहा जाता था।

हरी का ब्याज–किसानों के पास हरी की वसूली के समय रुपये न होना स्वाभाविक था।इसलिए जो किसान उस समय हरी की रकम (जो कि लगान की रकम पर दो आना प्रति रुपया के हिसाब से वसूल की जाती थी) अदा नहीं कर पाता था तो उस पर ठिकानेदार ब्याज लगा देते थे। इस ब्याज को हरी का ब्याज कहते थे।

कांसा लाग–किसानों के यहां शादी व गमीं में ठिकानेदार बीस–पचीस पातल (भोजन) लेते थे। अगर कोई किसान नहीं देता तो उससे जबरन वसूल करते थे।यहाँ तक कि शादी–गमीं के महीनेभर बाद भी लाग कायम रखने के लिए माल दुबारा तैयार करवा कर लेते थे।

नाता लाग–किसान पहली पत्नी के मर जाने पर जब दूसरी पत्नी लाता था तो उससे सवा रुपया वसूल किया जाता था, जिसे नाता की लाग कहते थे।

भट्ठे की लाग–यदि किसान मकान बनाने के लिए भट्टा अथवा पंजावा बनाता तो इसकी भी लाग वसूल होती थी।

गाजर की क्यारी, तूड़े की पासी, घी और दूध–ये लागें खेती से ली जाती थीं। कनागतों में किसानों के घरों से घी, दूध, दही आदि मुफ्त में मंगाया जाता था।

इनके अतिरिक्त और भी कई तरह की लागें थीं जैसे कामदार की लाग, दस्तूर (ठाकुर के जन्मोत्सव) की लाग, खानगी की लाग, टोडे की लाग, मुहराना की लाग, नापाकोडी की लाग, चड़स की लाग, श्रीजी की लाग, सहणे की लाग, पटवारी का सेरुणा, बलाई की लाग, कोटड़ी खर्च, नाई की लाग, धानको–धोबी–कोली की लाग आदि अनेक लागें किसानों से ली जाती थी। सीकर के ठिकानेदार ने तो एक वर्ष हरिद्वार स्नान का खर्च भी अपने किसानों से वसूल किया था। नई–नई मोटरोंऔर घोड़े–घोड़ियोंकी कीमत तो प्रायः सभी ठिकानेदार अपने किसानों से वसूल करते ही थे।बिजली खर्चऔर मोटर के रख–रखाव का खर्च भी किसानों से लेते थे। ज्यों–ज्यों जागीरदारों में विलासिता और वैभव तथा प्रदर्शन की भावना तथा राजा–महाराजाओं की भांति ठाठ से रहने की भावना बढ़ती गई, वैसे–वैसे लागों की संख्या भी बढ़ती गई और दिन–प्रतिदिन नई–नई लागें किसानों पर लगाई जाती रहीं।[6]

भेट व नजराना

लागों के अलावा भेट और थी जो दशहरे, होली आदि त्यौहारों पर लोगों से वसूल की जाती थी। ठाकुर कहा करते थे, ''**म्हारे आवेलो तो के ल्यावेलो और म्है तेरे आंवाला तो के देवेलो**'' के सिद्धान्त के अन्तर्गत जब भी किसान किसी ठाकुर के पासजाता था या ठाकुर किसी गांव में जाता तो किसानों को उसे भेट देनी पड़ती थी।ठिकानेदार जब जोतने के लिए जमीन देते तो किसान से नजराना लेते थे।इस प्रकार किसान को ठिकानेदार के पैदा होने से मरने तक के प्रत्येक कृत्य पर टैक्स देना होता था और अपने यहां के प्रत्येक शुभ अवसर पर ठिकानेदार को भेंट देनी होती थी।[7]

बेगार

इन लाग–बागों के अलावा किसानों को बेगार करनी पड़ती थी। बेगार का इतिहास यह था कि पूर्व काल में जब राजा–प्रजा के सम्बन्ध विशुद्ध थे।राजा सचमुच प्रजा को पुत्रवत् समझता था और प्रजा उसे पितातुल्य मानती थी। तब प्रजाने भक्तिभाव से तय किया था कि राजा जब उसके गांव में

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

आवे तो उसका सब काम मुफ्त किया जाए, उसे सब सामान बिना मूल्य दिया जाय और सवारी का प्रबन्ध भी लोगों की तरफ से भेंट स्वरूप हो। आगे चलकर जब अंग्रेजी राज्य ने राजाओं को अपनी छत्रछाया में ले लिया और भीतरी व बाहरी शत्रुओं से उन्हें अभयदान दे दिया तो राजा निरंकुश हो गये और बेगार को हर समय की और जबरदस्ती की चीज बना डाली।धीरे–धीरे उनके नौकर–चाकर भी अपने को बेगार लेने के हकदार समझने लगे।जागीरदार लोग परम्परागत रूप से मुफ्त सेवाएं लेने लगे।[8]ब्राह्मण और राजपूतों के अलावा बाकी अन्य सभी जातियों को बेगार देनी पड़ती थी।चमार, माली, नाई, खाती तथा अन्य ऐसे लोगों से बिना कुछ दिये बेगार में आटा पिसवाना, पानी भरवाना, लकड़ी फड़वाना, ठिकाने के कागजों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाना, घोड़ों व ऊंटों के लिए चारा मंगवाना आदि अनेक काम कराये जाते थे।जागीरदार के यहां शादी–गमी में तो ऊंची जातियों से भी कई प्रकारकी बेगार ली जाती थी। बीहड़ में से ठिकाने के लिए घास खोदने के लिए किसान को प्रति घर पीछे आदमी बेगार में देना होता था।

संदर्भ सूची

1. डॉ पेमाराम – शेखावाटी किसान आंदोलन का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, मिनर्वा पब्लिकेशन, जोधपुर 2017, पृ. 106–107
2. जयपुर प्रजामण्डल किसान समिति की रिपोर्ट, 1941
3. सांवलराम भारतीय – आजादी के जन आन्दोलन, पृ. 13
4. ठाकुर देशराज – जाट जन सेवक, 1949, पृ. 328–329
5. रामनारायण चौधरी : आधुनिक राजस्थान का उत्थान, पृ. 58–59
6. डॉ पेमाराम –पूर्वोक्त, पृ. 35
7. आर्य हरफूल सिंह – शेखावाटी के ठिकानों का इतिहास एंव योगदान, जयपुर : पंचशील प्रकाशन, 1987, पृ. 33–34.
8. जयपुर ज्यूडिसियल रिकॉर्ड, फाइल नं. ज–2–2549, भाग 5, 1934, पृ. 74, रा.रा.अ., बीकानेर

© RRIJM 2015, All Rights Reserved